International Journal of Multidisciplinary Education and Research
www.educationjournal.in
ISSN: 2455-4588
Received: 30-05-2021, Accepted: 14-06-2021, Published: 29-06-2021
Volume 6, Issue 2, 2021, Page No. 43-45

सीमांत समाज में महिलाओं की समस्याएं, समाधान एवं चुनौतियां

डॉ. तृप्ति मांझी
सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, शहपुरा, डिण्डोरी, मध्य प्रदेश, भारत

सारांश
भारतीय परिवारों में चाहे वे नगरीय हों या ग्रामीण या सीमांत समाज की महिलाओं की स्थिति सदैव ही चिंताजनक रही है। एक ओर तो महिलाओं को शक्ति का रूप माना जाता है वहीं दूसरी ओर उनके सशक्तिकरण के मुद्दे और उन पर गहन चिंतन किया जाता रहा है। यदि हम महिलाओं की समस्याओं और दशाओं का आंकलन क्षेत्रीय आधार पर करें तो स्थिति एकदम विपरीत दिखाई देती है और समस्याओं के स्वरूप में भी गंभीर अंतर स्पष्ट होता है। जहां एक ओर नगरीय समाज में समानता, स्वतंत्रता के मुद्दे हैं तो वहीं सीमांत समाज में आधरभूत आवश्यकताएं और मौलिक अधिकारों की प्राप्ति में बाधाओं को देखा जा सकता है। प्रस्तुत शोधपत्र में सीमांत समाज की महिलाओं की इन्ही समस्याओं, इनके समाधान की चुनौतियों तथा सशक्तिकरण के सूचकों एवं निर्धारकों को विवेचित करने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्दः ग्रामीण महिलाओं, सीमांत समाज, आधरभूत आवश्यकताएं, समस्याएं, सशक्तिकरण के सूचकों, निर्धारक, समाधान, चुनौतियां

प्रस्तावना

भारत के लगभग सभी क्षेत्रों में विकासात्मक तत्व दृष्टिगोचर हो रहे हैं, देश की लगभग डेढ़ सौ करोड़ की आबादी इस विकास से अछूती नही है, चाहे वह जनजातीय, ग्रामीण या नगरीय समुदाय ही क्यों न हो विकास हर क्षेत्र में किया जा रहा है। परन्तु यह विकास कहीं न कहीं असंतुलित दृष्टिगोचर होता है। देश के जनजातीय ग्रामीण एवं छोटे कस्बाई क्षेत्रों में विकास के तत्व तो दिखाई देते है परन्तु पर्याप्त या संपूर्ण विकास की कल्पना करना अत्यधिक कठिन प्रतीत होता है। जहां एक ओर नवीन तकनीकी विकास के फलस्वरूप सूचना एवं संचार माध्यमों के विकास से देश की जनसंख्या अत्यधिक सरल व सहज जीवन–यापन भी कर रही है, वहीं दूसरी ओर देश में जनजातीय क्षेत्रों में महिलाओं की एक बड़ी आबादी इन नवीन तकनीकी, सूचना, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार जैसे जीवन के विभिन्न विकासात्मक आयामों सं अछूती है जिससे इनके संपूर्ण विकास की परिकल्पना कर पाना कठिन है। देश में महिलाओं के आर्थिक सामाजिक विकास को लेकर जो भी नीतियां बनायी जाती हैं वह केवल शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित व केन्द्रित हो जाती हैं, जबकि अधिकांश ग्रामीण एवं सुदूरवर्ती क्षेत्रों एवं कस्बों में निवास करने वाली सीमांत महिलाएं इन विकास नीतियों, कार्यक्रमों, योजनाओं का लाभ नहीं उठा पाती और उपेक्षित ही रह जाती हैं। शहरी एवं ग्रामीण सूदरवर्ती क्षेत्रों का यह असंतुलन तथा वर्तमान समय में महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक भूमिकाओं में हो रहे परिवर्तनों का असंतुलन भारत जैसे विकासशील एवं प्रगतिशील राष्ट्र का विकसित राष्ट्र की श्रेणी में आने के लिए एक चुनौती है और कहीं ना कहीं यह एक चेतावनी भी है, कि जब देश में महिला जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा उपेक्षित, साधनहीन तथा अनेक आयामों में विकास की परिधि से बाहर है तो किन आधारों पर भारत एक विकसित राष्ट्र बन पायेगा।

मुख्यधारा समाज की अपेक्षा सीमान्त जनजातीय समुदायों में महिलाओं की समाजिक एवं आर्थिक स्थितियों एवं भूमिकाओं के संबंध में अनेक अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि जनजातीय समुदायों में महिलाओं की स्थिति सापेक्षिक रूप से सुदृढ़ है। हीरालाल शुक्ल ने जनजातीय समाज के संदर्भ में कहा है कि आदिवासी समाज लिंगगत भेदभाव से मुक्त है। ''व्यक्तिक तथा आर्थिक मसलों में आदिवासियों की सामाजिक संरचना में बराबरी का जो ''एथास'' (आचार–व्यवहार) देखने को मिलता है, उससे मानवविज्ञानियों ने आदिवासी महिलाओं को महिमामण्डित कर दिया है।

यथार्थ में महिलाओं की यह प्रस्थिति उनकी अभाव ग्रस्त आर्थिक–सामाजिक दशाओं के कारण ओझल हो जाती है। आधुनिक मुख्यधारा सभ्य समाजों में जहां लिंग आधारित सामाजिक भेद संबंधी अवधारणाओं का जन्म हुआ और जिसका प्रसार एवं प्रभाव वर्तमान समय में सीमांत जनजातीय समुदायों की महिलाओं की प्रस्थिति एवं भूमिकाओं के निर्वहन पर दृष्टिगोचर है।

उपरोक्त विवेचन को दृष्टिगत रखते हुये सीमांत युवा महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक भूमिकाओं में हो रहे परिवर्तनों को उनकी सक्षमता/सशक्तीकरण के मार्ग के बाधक संकेतकों के आधार पर की जा सकती है –

- स्वयं पर निर्णय लेने की शक्ति/क्षमता का अभाव।
- लैंगिक अधिकारों के प्रति जागरूकता एवं चेतना की कमी।
- निर्णय लेने के लिये सूचना एवं संसाधनों तक पहुंच का अभाव।
- शिक्षा के समान अवसरों की कमी।
- विकल्पों के चयन की क्षमता की कमी।
- पारिवारिक/सामूहिक निर्णयों की प्रभावपूर्ण क्षमता का ह्रास।
- निर्णयों पर स्वीकार्यता की कमी।
- आर्थिक स्वायत्ता की कमी।
- राजनैतिक चेतना एवं सहभागिता की कमी।
- परिवार एवं समाज में पुरूषों के सम–सम्मान एवं व्यवहार में कमी।

महिलाओं में शक्तिहीनता के कारणों को निम्नलिखित रूप से विवेचित किया जा सकता है

- **निम्न सामाजिक दशाएंः** महिलाओं को मुगलकाल एवं अंग्रेजों के शासन के पष्चात अनेक सामाजिक कुरीतियों एवं प्रथाओं के फलस्वरूप उपेक्षित एवं वंचित जीवन जीने के लिये

विवश होना पड़ा है। साथ ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों एवं मान्यताओं पर आधारित अनेक वर्जनाओं एवं निषेधों को महिलाओं पर आरोपित किया है।

- **शिक्षा का अभाव**: 1981 से 2011 तक के दषकों में भारत में महिलाओं की कुल साक्षरता दर सतत रूप से पुरूषों की अपेक्षा अत्यधिक कम रही है। जहां 1981 में महिला साक्षरता दर 29.76 प्रतिशत थी वहीं चार दषक बाद भी महिलाओं की साक्षरता दर 65.46 प्रतिशत पर पहुंच पायी है, जो महिलाओं की निम्न साक्षरता दर उनकी निम्न पारिवारिक व सामाजिक प्रस्थिति एवं निम्न आर्थिक सहभगिता के संकेतक के रूप में स्पष्ट होती है। महिलाओं में समानता, समता एवं अधिकारों के प्रति चेतना, निर्णय लेने की शक्ति और अधिकार के अभाव का कारण इनका अशिक्षित रहना रहा है।
- **आर्थिक निर्भरता**: शिक्षा का अभाव, सामाजिक रूढ़ियों, प्रथाओं एवं मान्यताओं ने पुरूषों के समान आर्थिक क्रियाओं में अवसर प्रदान नहीं किये जिससे महिलाओं को आर्थिक रूप से पुरूषों पर निर्भर रहना पड़ता है। भारत की कुल जनसंख्या में 39.1 प्रतिशत ही सक्रिय कार्यशील जनसंख्या है। जिसमें 68 प्रतिशत पुरूषों एवं मात्र 31.63 प्रतिशत महिलाए ही आर्थिक क्रियाओं में सहभागी भूमिकाएं निभाती हैं, लेकिन आर्थिक संसाधनों पर अधिकार नहीं पा पाती हैं। अकार्यशील जनसंख्या में सर्वाधिक 58.9 प्रतिशत महिलाएं है। उनकी आर्थिक क्रियाओं में असहभागिता उनकी शक्तिहीनता के संकेतक एवं निर्धारक के रूप में स्पष्ट होता है। भारत में महिला श्रम शक्ति सहभागिता दर (LFPR) का निरन्तर घटना भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में एक कठिन चुनौती के रूप में देखा जा रहा कार्यशील एव अकार्यशील जनसंख्या के संबंध में 2004–05 एवं 2009–10 की अवधी में किए गये सर्वेक्षण से यह स्पष्ट होता है कि महिलाओं की श्रम शक्ति सहभागिता दर (LFPR) में 33.3 प्रतिषत की गिरावट आयी है, जो कि ग्रामीण क्षेत्रों में 17.8 प्रतिषत एवं नगरीय क्षेत्रों में 14.6 प्रतिषत है। ये स्थितियां महिलाओं के विकास के साथ–साथ भारत के आर्थिक विकास में भी एक चुनौती के रूप में दिखाई देती है। मम्मेन एवं पेक्सन (2008)[1] ने महिलाओं की विभिन्न व्यवसायों में सक्रियता को उनके आर्थिक आत्मनिर्भरता के विकास में एक जटिल कारक एवं समाज में प्रस्थिति के सूचक के रूप में विवेचित किया है।
- **निर्णय लेने की शक्ति का अभाव**: भारत में पितृसतात्मक परिवार के साथ ही महिलाओं में अषिक्षा, आर्थिक निर्भरता, जागरूकता एवं चेतना का अभाव ही उनके द्वारा निर्णय लेने के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न करता है।
- **सामाजिक सुरक्षा का अभाव**: महिलाओं के विरूद्ध हिंसा एवं अपराध, विवाह विच्छेद, पति द्वारा परित्यक्त होने आदि अनेक स्थितियों में सामाजिक अवहेलनाओं, निंदाओं एवं तिरस्कार का सामना करना पड़ता है, जिससे वे स्वयं को सामाजिक रूप से असुरक्षित पाते हुए गंभीर स्थितियों में भी निर्णय नही ले पाती हैं।
- **स्वास्थ्य**: महिलाओं के स्वास्थ्य जैसे – मासिक चक्र, गर्भावस्था, प्रसव एवं प्रसवोपरांत आदि स्थितियों पर सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारको का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। मुख्य रूप से ग्रामीण व जनजातीय महिलाओं के प्रजनन स्वास्थ्य के अन्तर्गत सामाजिक–सांस्कृतिक कारकों, प्रथाओं, परम्पराओं, निषेधों एवं क्रिया व्यवहारों को स्वास्थ्य निर्धारक के रूप में देखा जा सकता है।

राहुल लाहोटी (2003)[2] के अनुसार भारत जैसे पितृसत्तात्मक समाज में पिछले तीन दषकों की उच्च आर्थिक वृद्धि दर षोध अध्ययनों को इसलिये रोचक बनाती है क्योंकि 2001 से 2011 में 927 से 914 पर घटते लिंगानुपात में स्त्रियों की सुदृढ़ स्थिति दर्षित नहीं होती है। साथ ही यह भी कि भारत में मातृ मृत्यु दर और महिला स्वास्थ्य की स्थिति भी अत्यधिक निम्न है।

1964 में चीन में ''मास इम्पावरमेंट ऑफ पीपुल'' पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशन में दोहरे उद्देश्यों को लेकर हुई थी। इसका प्रथम उद्देश्य, असमान राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संरचना को चुनौती देना और दूसरा उद्देश्य असमान व्यवस्थाओं में परिवर्तन था। विशेष रूप से 1980 के दशक से सशक्तिकरण ''मानव विकास'' से व्युत्पन्न वैचारिकी के रूप में प्रतिस्थापित हुआ। गीता सेन एवं केरेन ग्राउन (1987)[3] एवं (1993)[4] ने ''तीसरी दुनिया की महिलाओं के विकास, संकट एवं वैकल्पिक परिकल्पना सशक्तिकरण तथा मानव अधिकार के परिपेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण'' को विवेचित किया है। सन् 1990 के आसपास विकास की मुख्यधारा संस्थाओं ने इस अवधारणा को विकास के एक वैकल्पिक उपागम के रूप में अपना लिया है।

नारायन (2002)[5] ने सशक्तिकरण को ''शक्ति'', किशोर, सुनीता, सुबैया एवं लेखा (2008)[6] ''संसाधनों पर नियंत्रण'' व ''व्यैक्तिक अधिकारों'', जेजीबॉय, शिरीन (2000)[7] ''निर्णय लेने की शक्ति'' या ''स्वायत्ता'' गेज (1995)[8] ''प्रस्थिति'' एवं ''समिति'', मेसन (1998)[9] ''घरेलु आर्थिक शक्ति'', ''स्वायत्ता'' एवं ''अन्तर्निमेय लैंगिक स्तरीकरण'' तथा वर्ल्ड डेवलपमेन्ट रिपोर्ट (2000)[10] ने लैंगिक समानता के अर्थ में विवेचित किया है।

उपरोक्त संदर्भो से स्पष्ट है कि महिलाओं में सशक्तिकरण की व्याख्या उपरोक्त संकेतकों के आधार पर की जा सकती है।

आज विश्वभर में एक नया समाज उभर रहा है, जहां महिलाओं की रूढ़िवादी प्रस्थिति में परिवर्तन की आवश्यकता को अनिवार्य माना जाने लगा है। देश की अर्थव्यवस्था के लिए भी महिलाओं को उत्पादन की इकाई एवं संसाधन के रूप में देखा जाने लगा है, और महिला श्रम सहभागिता दर को बढ़ाने के प्रयास किये जाने लगे है। वहीं श्रम एवं कार्य सहभागिता में शिक्षा को प्राथमिक संकेतक व निर्धारक के रूप में विवेचित किया जा रहा है; क्योंकि शिक्षा केवल ज्ञान की ही नहीं अपितु वह व्यक्ति के सामाजिक–आर्थिक पद एवं प्रस्थिति की भी अभिसूचक है। शिक्षा सषक्तिकरण में ज्ञान, समझ, अवसर, प्राप्ति, सम्मान/प्रतिष्ठा तथा कार्यशीलता के रूप में राजनैतिक, सामाजिक व आर्थिक शक्तियों तक पहुंच एवं नियंत्रण के आधार पर उर्ध्वगामी प्रभाव डालती है। इसी प्रकार ''पद'' एवं ''स्वायत्ता'' सशक्तिकरण की स्थिति को प्रकट करता है। महिलाओं में विकल्पों के चयन की क्षमता, संसाधनों पर पहुंच एवं नियंत्रण, निर्णय लेने की क्षमता तथा लैंगिक आधर पर स्वतंत्रता उनकी स्वायत्ता की संकेतक है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारत जैसे पुरूष प्रधान समाज में महिलाओं की स्वतंत्रता, समानता एवं स्वायत्ता की परिकल्पना करना कठिन है। परन्तु फिर भी वर्तमान सामाजिक–सांस्कृतिक सुधारों एवं परिवर्तनों, संवैधानिक प्रावधानों एवं सुरक्षा, वैष्विक धरातल पर प्रयासों, मानव विकास एवं मानव संसाधन संबंधी वैचारिकी के प्रभाव से भविष्य में महिलाओं के सषक्तिकरण की अपेक्षा की जा सकती है। कुछ जनजातियों को छोड़कर प्रायः सभी जनजातीय समाजों में महिलाओं का स्थान या तो पुरूषों के बराबर या उससे ऊँचा होता है, अर्थात् महिलाओं की स्थिति पुरूषों की तुलना में अधिक सफल एवं सृदृढ़ है।

संदर्भ सूची

1. मन्नेन, क्रिस्टीन, एवं क्रिस्टीना पेक्सन (2008), ''वूमेनस् वर्क एण्ड इकोनॉमिक डेवेलपमेन्ट'', द जर्नल ऑफ इकॉनामिक पर्सपेक्टिव 14 (4)।
2. लाहोटी राहुल (2003), ''इकोनॉमिक ग्रोथ एण्ड फीमेल लेबर

फोर्स पार्टिसिपेषन इन इण्डिया, वर्किंग पेपर नं. 414, भारतीय प्रबंध संस्थान, बेंगलूर।
3. सेन, गीता एवं केरेन ग्राउन (1987), ''डेवेलपमेन्ट क्राइसिस एण्ड अलटर्नेटिव विजन्स : थर्ड वर्ल्ड वुमेन पर्सपेक्टिव '', न्युयार्क, मन्थली रिव्यु प्रेस।
4. सेन, गीता एवं केरेन ग्राउन (1987), ''वुमेन इम्पावरमेन्ट एण्ड ह्यूमन राइट : द चेलेन्ज टूँ पॉलिसी'' प्रेजेन्टेड पेपर, पॉपुलेषन समिट ऑफ द वर्ल्ड सांइटिफिक एकेडमी ।
5. नारायन, डी. (2002), ''इम्पावरमेन्ट एण्ड पावर्टी रिडक्षन'' वर्ल्ड बैंक, वाषिंगटन डी. सी.।
6. किषोर, सुनीता, सुभैया एवं लेखा (2008), ''अंडरस्टेंडिग वुमेन इम्पावरमेन्ट'' ए कम्पेरिटिव एनालिसिस ऑफ डेमोग्राफिक हेल्थ सर्वे (डीएचएस) डेटा।
7. जेजीबॉय, षिरीन (2000), ''वुमेन ऑटोनोमी इन रूरल इण्डिया : इट्स डिटरमिनेन्ट्स एण्ड दी इन्फ्लुएन्स ऑफ कान्टेस्ट'', इन वुमेन इम्पावरमेन्ट एण्ड डेमोग्राफी प्रोसेस : मूविंग बियान्ड कायरो, डेवेलपमेन्ट, (संपादित) हेरियेट प्रेसर एण्ड गीता सेन, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड।
8. गेज, अनासतासिया जे. (1995), ''वुमेन्स सोषियो–इकॉनामिक पॉजिषन एण्ड कान्ट्रासेप्टिव बिहेवियर इन टोगो'' स्टडीज इन फैमिली प्लानिंग, 26 (5) ।
9. मेसन, कारेन (1998),''वाइव्स इकानॉमिक डिसिजन–मेकिंग इन दी फैमिली : फाइव एषियन कन्ट्रीज्'' (संपादित) दी चेन्जिंग फैमिली इन कम्पैरिटिव पर्सपेक्टिव : एषिया एण्ड दी युनाइटेड नेषन, ईस्ट–वेस्ट सेन्टर, हॉनोलुलु।
10. वर्ल्ड डेवलपमेन्ट रिपोर्ट (2000), ''अटैकिंग पॉवर्टी'' न्यूयार्क ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस।
11. मांझी तृप्ति (2015), भारत के आर्थिक विकास में महिलाओं की श्रमषक्ति सहभागिता, इंटरनेषनल जर्नल ऑफ अपलायड रिसर्च, वॉल्युम–1, इष्यु–13
12. मांझी तृप्ति (2017), जनजातीय महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक भूमिकाओं में परिवर्तन की स्थिति : एक विवेचन, इंटरनेषनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसच एण्ड डेवेलपमेन्ट, वॉल्युम–4, इष्यु–4